ध्यान

मोरारजी देसाई राष्ट्रीय योग संस्थान

आयुष मंत्रालय, भारत सरकार

68, अशोक रोड, गोल डाक खाना के निकट, नई दिल्ली–110 001

ध्यान

ध्यान क्या है ?

ध्यान शब्द की व्युत्पत्ति संस्कृत के 'धी' शब्द से हुई है, जिसका अर्थ है मनन करना, चिंतन करना, सोचना अथवा विचार में लगा हुआ। महर्षि पतंजलि के अनुसार

तत्र प्रत्यैकतानता ध्यानम् ।।3.2।।

''ध्यान केंद्रित की गई वस्तु पर, ध्यान का एक निरंतर प्रवाह ध्यान कहा जाता है।''

ध्यान को दर्शन के सांख्य मत द्वारा **'ध्यानं निर्विशयं मनः'** के रूप में परिभाषित किया गया है जो सभी परेशान और विचलित करने वाली भावनाओं, विचारों और इच्छाओं से मन की मुक्ति के रूप में अनूदित है। ध्यान हमेशा धारणा से शुरू होता है, अर्थात् एकाग्रता; एकाग्रता के माध्यम से मन अविचलित और स्थिर हो जाता है और जब एकाग्रता विचार के निरंतर प्रवाह को एक वस्तु की ओर ले जाती है तो वह ध्यान है।

दो संस्कृत शब्द 'ध्यान' और 'निदिध्यानासन' दोनों ही कभी–कभी ध्यान, समाधि के लिए प्रयोग किए जाते हैं, परंतु दोनों में भेद है क्योंकि 'निदिध्यानासन' का अर्थ है 'परावर्तन अथवा चिंतन',एक विधि जिसका प्रयोग वेदांत दर्शन की संन्यास परंपरा में किया गया है जबकि, ध्यान एक चेतन और ऐच्छिक प्रयास है जिसका प्रयोग चेतन मस्तिष्क की गतिविधियों को शांत करने हेतु किया जाता है।

ध्यान के विषय में कुछ भ्रांतियाँ

ध्यान केवल किसी विषय के बारे में सोचना अथवा पवित्र मंत्रों का उच्चारण करना, अथवा किसी एक विचार या वस्तु विशेष पर ध्यान एकाग्र करना नहीं है। यह कर्मकाण्डी पूजा अथवा भौतिक लाभ और फल प्राप्ति के लिए प्रार्थना नहीं है। ध्यान शब्द स्पष्ट रूप से धारणा के लिए प्रयोग किया गया है और बंद आँखों के साथ विभिन्न प्रकार की एकाग्रता एवं सोच की ओर संकेत करता है। वस्तुतः सामान्य विद्यार्थी, शोधार्थी और विचारक धारणा और ध्यान का प्रयोग अविवेकपूर्ण तरीके से करते हैं। ध्यान सिखाया नहीं जा सकता। यह एक अभिव्यंजक शब्द नहीं है बल्कि अनुभव करने की कला है जहाँ अभ्यासकर्ता की चेतना समान रूप से शरीर के भीतर और शरीर के बिना, बिना रूके अथवा विभाजन के लक्षणों का प्रदर्शन किए समान रूप से फैल जाती है।

ध्यान करने से पूर्व स्थान, ऋतु, समय, आहार, मुद्रा और नाड़ीशुद्धि का महत्त्व

स्थानः प्राचीन शास्त्रों ने उत्तम ध्यान के लिए विभिन्न स्थानों जैसे पीपल वृक्ष, मंदिर, गोशाला, धार्मिक स्थान, नदी तट, गुफा, वन पर बल दिया है। स्थान चुनने के लिए सबसे महत्त्वपूर्ण कारक वातावरण है। स्थान के आसपास का स्थान नीरव, शांतिपूर्ण और स्वच्छ होना चाहिए। सकारात्मक वातावरण स्वयं ही एक व्यक्ति को ऊर्जा, प्रेरणा और आध्यात्मिक ज्ञान की खोज के प्रयास की इच्छा से भर देता है। यह सलाह दी जाती है कि आध्यात्मिक स्पंदन निर्मित करने हेतु एक व्यक्ति को प्रतिदिन एक ही स्थान पर ध्यान करना चाहिए।

ऋतु वसंत और शरद–यह दोनों ही ऋतुएँ अभ्यास के लिए उपयुक्त हैं क्योंकि हवा में अधिक शीत और ताप नहीं होती और अभ्यासकर्ता ऋतुजन्य समस्याओं से पीड़ित नहीं होता।

समय ध्यान के लिए, संपूर्ण दिन में हर संधि के दौरान 45 मिनट के चार काल होते हैं। यह सूर्योदय के पूर्व (ब्रह्म मूहूर्त में), दोपहर में, संध्या काल में और मध्य रात्रि में होते हैं। सर्वोत्तम समय ब्रह्म मुहूर्त का माना जाता है।

आहार योग के अभ्यास के दौरान उदर पूरी तरह नहीं भरा होना चाहिए; यह भोजन से आधा भरा होना चाहिए, एक चौथाई जल से और शेष हवा से। प्राचीन वेद तीन प्रकार के भोजन की व्याख्या करते हैं– सात्विक, राजसिक और तामसिक। आहार का मूल गुण है कि इसे शरीर के घटकों को (धातु इत्यादि जैसे त्वचा, मांस, रक्त, अस्थिमज्जा, वसा और वीर्य) और स्वाद ग्रंथियों और पाचन तंत्र के लिए उपयुक्त होना चाहिए। सात्विक आहार इन सारे गुणों से युक्त होता है। राजसिक और तामसिक आहार ध्यान के अभ्यासियों के लिए उपयुक्त नहीं है।

मुद्रा आसन अष्टांग योग का तीसरा अंग है, जो विशिष्ट शारीरिक मुद्रा है जो ऊर्जा–प्रणाली को मुक्त करती है। जब आसन का अभ्यास किया जाता है, तो स्थिरता आती है और प्राण उन्मुक्त होकर विचरण करते हैं। आसन स्थिरता, स्वास्थ्य, अंगों में हल्कापन, मानसिक संतुलन लाते हैं और मानसिक चंचलता को रोकते हैं, चुस्ती, संतुलन, सहनशीलता, जीवनी शक्ति लाते हैं।

ध्यान के लिए उपयुक्त आसन हैं– सिद्धासन, पद्मासन, मुक्तासन, स्वास्तिकासन, सुखासन और कुछ अन्य। इन सभी ध्यान मुद्राओं में सीधे रहने की मुद्रा पर ही जोर रहता है।

ध्यान के लिए प्रयोग किए जाने वाली प्रमुख मुद्राएँ हैं–

सिद्धासन (एक सिद्ध मुद्रा) : सिद्धासन को 84 लाख आसनों में से अग्रणी माना गया है। अन्य आसन भी स्वस्थ शरीर प्राप्त करने के लिए लाभदायक माने गए हैं परंतु सिद्धासन ध्यान, प्रार्थना और पूजा, प्राणायाम और समाधि के लिए अहम माना गया है।

आसन पर बैठने के दौरान मूलाधार एक पैर की एड़ी से दबा हुआ होना चाहिए और दूसरा पैर गुप्तांग पर स्थित होना चाहिए। स्थिर और संतुलित रहते हुए, चेतना को नियंत्रित किए हुए, स्थिर रूप से भौंहों के केंद्र में देखें, यह मुक्ति के लिए द्वार को खोलता है। यह सिद्धासन कहलाता है। प्राचीन शास्त्रों में यह उल्लेख किया गया है कि दृष्टि को अलग अलग तरीकों से केंद्रित करने से अलग–अलग परिणाम प्राप्त किए जा सकते हैं–

1 **भ्रूमध्य दृष्टि :** भौहों के बीच में ध्यान लगाना

2 **सम दृष्टि :** सामने की ओर देखना

3 **नासिकाग्र दृष्टि:** नाक के आगे के भाग को देखना

4 **अर्द्धोन्मेष दृष्टि:** आधी खुली पलकें

5 **नेत्रबंध दृष्टि:** बंद आंखें

पद्मासन (पद्म मुद्रा) : भूमि पर बैठे हुए जबकि बाएँ पैर की एड़ी दाहिनी जांघ पर ताकि नाभि के अधिकाधिक निकट स्थित हो। इसके बाद दाहिना पैर बाईं जांघ पर इस प्रकार स्थित हो कि दोनों एडियाँ एक दूसरे को नाभि के जितना समीप संभव हो स्पर्श कर सकें। कशेरुक स्तंभ और शरीर सीधा होना चाहिए। ध्यान रखना चाहिए कि घुटने जमीन को स्पर्श करें। हाथ

को गोद में, हथेलियों को ऊपर की ओर या घुटनों पर रखा जाना चाहिए। पैरों को जांघों पर रखने के अनुक्रम को बदलकर पूरी प्रक्रिया को दोहराया जाता है।

सिद्धासन की तरह यह आसन ध्यान, प्रार्थना, अराधना और प्राणायाम के लिए प्रयोग किया जाता है, परंतु इसमें एक अतिरिक्त विशिष्टता है कि यह निश्चित रूप से शारीरिक स्वास्थ्य के लिए सिद्धासन से अधिक प्रभावशाली और उपयोगी है।

सुखासन (सरल मुद्रा) : पैरों को मोड़कर आराम से बैठे हुए, हाथ घुटनों पर होनें चाहिए। जो व्यक्ति ध्यान, प्रार्थना या प्राणायाम के लिए पद्मासन अथवा सिद्धासन नहीं कर सकते वह इस मुद्रा में बैठ सकते हैं। इस आसन का यह नाम इसलिए है क्योंकि कोई भी आराम से इस मुद्रा में लंबे समय तक बैठ सकता है। अनम्य पैर वाले अभ्यासकर्ताओं को इसकी सलाह दी जाती है। हाथों और आंखों की स्थिति सिद्धासन अथवा पद्मासन के समान ही होगी।

नाड़ी शुद्धिः शास्त्रों में उल्लेख किया गया है कि योग का अभ्यास प्रारंभ करने से पहले नाड़ियों का शोधन करना अत्यंत आवश्यक है। षट्कर्म शरीर के आंतरिक तंत्र और अंगों को शुद्ध कर देता है, आसन शरीर को सबल बनाते हैं, प्रत्याहार से पाँच बोध का नियंत्रण होता है और प्राणायाम के अभ्यास से शरीर ज्योतिर्मय और स्फूर्त बनता है। ध्यान आत्मबोध में सहायक होता है और समाधि से प्रबोध की प्राप्ति होती है। अतः एक व्यक्ति को इसी क्रम में इसका अभ्यास करना चाहिए; अन्यथा योग के अभ्यास से हानि होने की संभावना है।

प्राणायाम शरीर की प्राणिक प्रक्रिया को समझने और नियंत्रित करने के लिए किया जाता है। श्वास प्राण को मुक्त करने का एक सीधा साधन है और जिस तरीके से हम श्वास लेते हैं वह प्राणिक स्पंदनों का आरंभ करता है जो हमारे पूरे अस्तित्व को प्रभावित करते हैं। प्राण और मन गहन रूप से अंतर्संबंधित हैं। एक की अस्थिरता का अर्थ है दूसरे की अस्थिरता। जब मन अथवा प्राण में से कोई भी एक संतुलित हो जाता है तो दूसरा भी स्थिर हो जाता है। हठ योग कहता है प्राण को नियंत्रित करें और मन भी नियंत्रित हो जाएगा। हठ योग कहता है कि मन को रहने दें, शरीर के कार्यों और प्राण पर ध्यान देना चाहिए और मन स्वतः स्थिर हो जाएगा। जब तंत्रिका आवेग कठोर और लयबद्ध होते हैं, तो मस्तिष्क के कार्यों को विनियमित किया जाता है और मस्तिष्क की तरंगें लयबद्ध हो जाती हैं। साँस लेने की प्रक्रिया सीधे मन से जुड़ी होती है। ध्यान का अभ्यास करते समय, अस्थिर मानसिक तरंगे अभ्यासकर्ता और ध्यान की गई वस्तु के बीच एक बाधा उत्पन्न करती हैं। इसलिए मन को नियंत्रित करने के लिए श्वास पर नियंत्रण होना चाहिए। यह पाया गया है कि प्राणायाम, मुद्रा और बंध तथा प्राण को विनियमित करने वाले कुछ आसनों के माध्यम से, मन को नियंत्रण में लाया जा सकता है।

ध्यान की अवस्था पाने के क्रम में, कुछ प्राणायाम का अभ्यास करना बहुत आवश्यक हैं जैसे नाड़ी शोधन, भस्त्रिका और भ्रामरी प्राणायाम।

ध्यान के प्रकार

जाति, संप्रदाय, वर्ण और राष्ट्र से निरपेक्ष, सारे धर्मों, परंपराओं, भाषाओं, संस्कृतियों को जोड़ने वाला–ध्यान एक विशिष्ट सार्वभौमिक परिघटना है। दैनिक मानवीय जीवन के हर पहलू में ध्यान का एक अथवा दूसरा रूप समाहित है। हिंदू, मुस्लिम, इसाई, सिख, जैन, बौद्ध, यहूदी हर धर्म में ध्यान प्रार्थना का एक अहम हिस्सा है। प्रख्यात संतों और अन्य ने ध्यान को अलग

अलग तरीके से, प्रमुख रूप से अपने अनुभव के आधार पर व्याख्यायित किया है। यह **'एकं सत् विप्रः बहुधा वदन्ति'** (सत्य एक है, परंतु विद्वान उसकी भिन्न व्याख्याएँ करते हैं) वैदिक कथन की पुष्टि करता है।

बौद्ध धर्म में ध्यानः बौद्ध धर्म दो पारंपरिक ध्यान रूपों को प्रस्तुत करता है– प्रथम को समता ध्यान कहा जाता है इसका उद्देश्य एकाग्रता विकसित करना है। दूसरे को विपश्यना ध्यान कहा जाता है इसका उद्देश्य समझ को विकसित करना है। समता ध्यान का उद्देश्य संयोजन की स्थिति तक पहुंचना है, जबकि विपश्यना ध्यान का उद्देश्य आत्मज्ञान की प्रक्रिया से काफी निकटता से संबंधित है।

जैन धर्म में ध्यानः प्रेक्ष्य ध्यान– प्रेक्षा का शाब्दिक अर्थ है 'देखना'। इसका मतलब है कि मन का ध्यान भीतर की ओर एकत्र करना तथा निरंतर अपने भीतर की ओर देखना जिससे अभ्यासकर्ता को नाम और रूप की दुनिया से मुक्त होने और पूर्ण सत्य चेतना में रहने का अवसर मिलता है। प्रेक्षा ध्यान का किसी भी समय कहीं भी अभ्यास किया जा सकता है, परंतु नियत समय पर नियमित अभ्यास त्वरित परिणाम लाता है। इस ध्यान में जिन चरणों का पालन किया जाता है वह हैं श्वास प्रेक्षा (श्वास पर ध्यान केंद्रित करना), अनिमेष प्रेक्षा (वस्तु पर ध्यान), शरीर प्रेक्षा (शरीर का बोधन एवं ध्यान), वर्तमान प्रेक्षा (वर्तमान का बोध एवं ध्यान), एकाग्रता। इसका अभ्यास बैठकर, लेटे हुए अथवा खड़े होकर भी किया जा सकता है। यह ध्यान धीरे–धीरे तनाव को मुक्त करता है और शरीर को विश्राम देता है, एक गहन मौन और धीमी गति से साँस लेने की पद्धति विकसित करता है, अवांछनीय चीजों को बोलने के प्रयास का दमन करता है, मन का रूपांतरण करता है तथा मौन और विश्रांति लाता है।

श्रेष्ठ ध्यान – इसका अर्थ है श्रेष्ठ पर ध्यान और कोई असाधारण श्रेष्ठ प्रकार नहीं, जैसा कि कई द्वारा बनाया गया है व जो अजपा जप की परंपरागत एवं वर्षों पुरानी तकनीक से भिन्न है। आने वाले और बाहर जाने वाले प्राण पर एकाग्रता के साथ एक प्रकार से निरंतर और विशेष बीज मंत्र का पाठ व लगातार दोहराव। मन और विचार, श्वास (जो जैविक शक्ति है) के साथ विचरण करते और चिह्नित किए जाते हैं।

घेरण्ड संहिता के अनुसार– ध्यान तीन प्रकार का कहा जाता है–

1) **स्थूल ध्यानः** अपने गुरू अथवा ईश्वर (इष्ट देवता) की छवि का मनन करना स्थूल ध्यान कहलाता है। स्थूल ध्यान की वस्तु स्पष्ट रूप से दृष्टिगत होती है। यह प्रारंभिक अभ्यासकर्ताओं के लिए है।

2) **सूक्ष्म ध्यानः** इस ध्यान में ध्यान की वस्तु कुंडलिनी, सर्प शक्ति, है। आंखों के क्षेत्र को पार कर जाने के बाद यह फिर अदृश्य हो जाती है।

3) **ज्योर्तिमय ध्यान**–तेजोध्यान स्थूल ध्यान से 100 गुना श्रेष्ठ कहा जाता है। इस ध्यान में ध्यान कर रहा योगी एक प्रकाश को देखता है और उस पर अपना मन केंद्रित करता है। योगी को दिखने वाला प्रकाश आंतरिक प्रकाश है जो बाहर दिखाई दे ऐसी बाहरी रोशनी नहीं। स्पष्ट कहा जाए तो प्रकाश न तो एक छवि है और न ही कोई बोध। एक योगी, जो भ्रामरी कुंभक में सफल होता है, उसे कुछ आंतरिक ध्वनियाँ सुनाई देती हैं जो दिखने वाले प्रकाश के साथ संयुक्त हो जाती हैं और योगी का मन उस मिश्रण पर स्थिर हो

जाता है। इस प्रकार ध्वनि, प्रकाश और जानकार मन एक हो जाते हैं।

गोरक्ष पद्धति दो प्रकार के अभ्यासों का वर्णन करती हैं– सकल और निष्कल। ये दोनों घेरण्ड संहिता के स्थूल और सूक्ष्म ध्यान के समान हैं।

ऊँ ध्यान–

एक प्रकार का ध्यान है जो योगाभ्यासियों के मध्य अति लोकप्रिय है वह है ऊँकार ध्यान, जिसका अभ्यास इस प्रकार किया जाता है–

ध्यान का अभ्यास करने के लिए व्यक्ति को एकांत स्थान अथवा किसी कमरे में किसी ध्यान मुद्रा में बैठना चाहिए। शरीर को सीधा रखते हुए, आंखों को बंद रखते हुए हाथों को ज्ञान मुद्रा में घुटनों पर रखकर, 'ऊँ' का उच्च स्वर में उच्चारण करना चाहिए। 'ऊँ' शब्द का बार–बार उच्चारण किया जाना चाहिए। ध्वनि की तरंगों को शरीर के साथ–साथ स्थान के वातावरण को भी प्रभावित करना चाहिए, इस प्रकार कि केवल मुख ही नहीं संपूर्ण शरीर भी उसकी पुनरावृत्ति कर रहा है। ऐसा आभास हो और केवल वह कक्ष ही नहीं बल्कि संपूर्ण वातावरण ऊँ की ध्वनि से परिपूर्ण हो गया हो। यह मस्तिष्क और तन दोनों को समान रूप से प्रभावित करता है। तन प्रशांत, हर्षित एवं स्वस्थ हो जाता है। यह प्रक्रिया अन्नमय और प्राणमय दोनों कोषों को समान रूप से प्रभावित करती है। इसके अभ्यास में धैर्य और ऊर्जा की आवश्यकता होती है। व्यक्ति की शारीरिक और मानसिक क्षमता के आधार पर 10–15 मिनट से शुरुआती अभ्यास शुरू होना चाहिए। यह स्थिति बहुत महत्त्वपूर्ण है क्योंकि यह ऊँकार ध्यान की नींव है।

दूसरे चरण में व्यक्ति के मुंह को बंद करके मानसिक रूप से शब्द को दोहराते हुए ऊँ जप करना होता है। जप केवल दिमाग में ही जारी रखना चाहिए। यह मन को संतृप्त करेगा, जैसे मौखिक जप शरीर को संतृप्त करते हैं। यह प्रक्रिया पहले चरण की तुलना में थोड़ी कठिन है, लेकिन पहले चरण के नियमित अभ्यास से मानसिक रूप से जप करना आसान हो जाता है। शारीरिक रूप से जप करते समय, कमरे में स्पंदन होता है, लेकिन मानसिक जप के दौरान उस जप करने वाले व्यक्ति के लिए तन ही कमरा बन जाता है और उसका तन ऊँ की ध्वनि से स्पंदित होने लगता है। इसका भी शुरू में 10–15 मिनट का अभ्यास किया जा सकता है और अवधि को धीरे–धीरे बढ़ाया जा सकता है। यह अभ्यास कुछ महीनों तक जारी रखा जा सकता है। अभ्यास के साथ मन और शरीर शांत हो जाते हैं और स्थिर व शांतिपूर्ण हो जाते हैं। जब मानसिक जप की प्रक्रिया आसान हो जाती है, तो धारणा अर्थात एकाग्रता की स्थिति प्राप्त हो जाती है, जो ध्यान तक ले जाती है।

ऊँ ध्यान का तीसरा चरण केवल ऊँ को सुनना है। मानसिक रूप से ऊँ उच्चारण के द्वारा मन को संतृप्त करने के बाद व्यक्ति के लिए तीसरा चरण शुरू होता है। इस चरण में न तो शरीर और न ही मन का उपयोग होता है, केवल साधरण रूप से श्रवण किया जाता है। शारीरिक रूप से और मानसिक रूप से ऊँ के जप के बाद, ऊँ की ध्वनि सुनना बहुत सरल हो जाता है जो व्यक्ति के हृदय से आती है।

ऐसा प्रतीत होता है कि ध्वनि स्वयं से निकल रही है और शारीरिक या मानसिक रूप से जप करने के लिए कोई प्रयास करने की आवश्यकता नहीं है। इसे अजपा जाप कहा जाता है।

जो कुछ भी इस अभ्यास के ऊपर उल्लिखित है वह प्राप्त करना सरल नहीं है। इस परिणाम को प्राप्त करने के लिए धैर्य और अभ्यास की आवश्यकता होती है। यह क्रमिक विकास है। योग के विभिन्न घटकों के अभ्यास से व्यक्ति कुछ महीनों में योग में कुशल नहीं हो जाता है। इंद्रियों को पूरी तरह से अधीन किया जाना चाहिए। ईश्वरीय गुणों का विकास किया जाना चाहिए। मन को अच्छी तरह से नियंत्रित किया जाना चाहिए। यह एक कठिन कार्य है।

ध्यान के लाभ

प्राचीन अध्येताओं के द्वारा शरीर और मस्तिष्क के बीच संबंध को व्यापक रूप से स्वीकार किया गया है। यह एक सुस्थापित तथ्य है कि कुछ आसनों, मुद्राओं, प्राणायाम और ध्यान इत्यादि का नियमित अभ्यास, शारीरिक और मानसिक कार्य में उल्लेखनीय अंतर प्रदान करता है। इस मनोदैहिक सम्पर्क को आधुनिक चिकित्सकों के द्वारा भी अधिकाधिक स्वीकार किया जा रहा है, इस अर्थ में कि जब तक मस्तिष्क शामिल नहीं है तब तक शरीर का उपचार नहीं किया जा सकता और इसके विपरीत भी।

ध्यान एक महत्त्वपूर्ण योगिक तकनीक है। ध्यान का नियमित अभ्यास, ध्यान करने वाले को प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष अनेक लाभ प्रदान करता है। यह न केवल अभ्यासकर्ता को अनेक मानसिक समस्याओं को नियंत्रित करने में सहायता करता है बल्कि आध्यात्मिक अनुभव के सर्वोच्च शिखर तक पहुँचने में भी सहायता करता है। नकारात्मक भावनाएँ जैसे भय, क्रोध, अवसाद, दबाव एवं तनाव, घबराहट, व्यग्रता, प्रतिक्रिया, चिंता इत्यादि कम हो जाते हैं और शांत मनोदशा विकसित होती है। अभ्यासकर्ता का समग्र व्यक्तित्व और दृष्टिकोण बेहतर हो जाता है और वह जीवन की विषम परिस्थितियों का सामना बेहतर ढंग से कर पाता है तथा अपने कर्तव्यों का निर्वहन भी। ध्यान का अभ्यास मनुष्य को एक सकारात्मक व्यक्तित्व, सकारात्मक विचार को धारण करने वाला और सकारात्मक कार्य करने वाला बना देता है। ध्यान एकाग्रता, स्मरण शक्ति, आत्मविश्वास, विचारों की स्पष्टता, इच्छा शक्ति, मस्तिष्क की ग्रहण शक्ति में वृद्धि करता है और थकान के स्तर को घटाता है।

नियमित रूप से ध्यान करने वाले योगी चुंबकीय और आकर्षक व्यक्तित्व विकसित कर लेते हैं। उसके संपर्क में आने वाले उसकी मधुर वाणी से, प्रभावशाली वाणी से, तेजस्वी नेत्रों, चमकदार वर्ण, मजबूत स्वस्थ शरीर, अच्छे व्यवहार, गुण और दैवीय स्वभाव से अत्यधिक प्रभावित हो जाते हैं। जिस प्रकार चुटकी भर नमक जल में गिरकर घुल जाता है, जिस प्रकार चमेली की मधुर सुगंध हवा में फैल जाती है, उसी प्रकार योगी की आध्यात्मिक आभा दूसरों के मस्तिष्क में प्रविष्ट हो जाती है।

अपने योग सूत्र में महर्षि पतंजलि ने कुछ शक्तियों का उल्लेख किया है जिन्हें एक साधक एकाग्रता और ध्यान से प्राप्त कर सकता है। उदाहरण के लिए कण्ठ के रिक्त स्थान पर, निरंतर और लंबे ध्यान के द्वारा योगी प्यास और भूख का अतिक्रमण कर लेता है। इस प्रकार के दावे की पुष्टि केवल विशिष्ट ध्यान विधियों के अभ्यास से ही हो सकती है।

ऐसे अनेक वैज्ञानिक अध्ययनों का निष्पादन किया गया है जिनके द्वारा प्राचीन विद्वानों के दावों की पुष्टि की गई है। अध्ययनों से यह उद्घाटित हुआ है कि ध्यान का अनुप्रयोग न केवल स्वास्थ्य के पुनर्नवीकरण के लिए प्रभावकारी है बल्कि यह आज के समाज द्वारा अनुभव की जाने वाली तनावपूर्ण परिस्थितियों से निपटने में भी अत्यधिक सहायक है।

बिक्री के लिए नहीं, मुफ्त प्रचार सामग्री

अधिक जानकारी के लिए कृपया सम्पर्क करें :

निदेशक

मोरारजी देसाई राष्ट्रीय योग संस्थान

आयुष मंत्रालय, भारत सरकार

68, अशोक रोड, गोल डाक खाना के निकट, नई दिल्ली–110 001

फोन : 011-23730417-18, 23351099, टेलीफैक्स : 011-23711657

ई–मेल : mdniy@yahoo.co.in वेबसाइट : yogamdniy.nic.in

Printed by : Dolphin Printo-Graphics # 011-23593541/42